रिपोर्ट करने योग्य

भारत के उच्चतम न्यायालय में

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार

2008 की सिविल अपील संख्या 1497

झब्बर सिंह (मृतक) कानूनी उत्तराधिकारियों और अन्य के माध्यम से ....अपीलकर्ता

बनाम

जगतार सिंह पुत्र दर्शन सिंह ..... प्रतिवादी

के साथ

2008 की सिविल अपील संख्या 1498

बालक राम पुत्र श्री संतू एवं अन्य ....अपीलकर्ता

बनाम

जगतार सिंह पुत्र दर्शन सिंह ..... प्रतिवादी

निर्णय

बेला एम. त्रिवेदी, जे.

1. दोनों अपीलें पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा आरएसए संख्या 1470/1983 और आरएसए संख्या 1557/1983 में पारित सामान्य/आम (common) निर्णय और आदेश दिनांक 17.08.2007 से उत्पन्न होती हैं, जिसके तहत उच्च न्यायालय ने मूल वादी जगतार सिंह (वर्तमान प्रतिवादी के पूर्वज / पूर्ववर्ती) द्वारा दायर उक्त अपीलों को स्वीकार करते हुए उनके द्वारा दायर सिविल सूट संख्या 420/1981 और 421/1981 को डिक्री कर दिया, जिसमें वह मूल प्रतिवादियों झब्बर सिंह और अन्य (वर्तमान अपीलकर्ताओं के पूर्वज / पूर्ववर्ती) के खिलाफ पूर्वक्रय का अधिकार / अग्रक अधिकार / हक़्शुफा का अधिकार (right of pre-emption) का दावा करते हुए, वाद भूमि के कब्जे के लिए डिक्री की मांग कर रहा था। वर्तमान अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी को क्रमशः मूल प्रतिवादी झब्बर सिंह और मूल वादी जगतार सिंह के कानूनी उत्तराधिकारी के रूप में प्रतिस्थापित किया गया है।

2. वर्तमान अपीलों को जन्म देने वाले तथ्यात्मक मैट्रिक्स निम्नानुसार हैं:-

(2.1) वादी जगतार सिंह द्वारा प्रतिवादी झब्बर सिंह एवं अन्य के विरुद्ध दीवानी वाद संख्या 420/1981 दायर किया गया था, 12 बीघे के परिमाण वाली भूमि के संबंध में, जो उस भूमि के 240/819 वें हिस्से को द्योतित करता है, जिसका परिमाण 40 बीघे 19 बिस्वा है, जैसा कि वाद के पैरा 1 में वर्णित है।उक्त भूमि मूल रूप से एक जीत सिंह के स्वामित्व में थी, जिसने इसे

प्रतिवादी झब्बर सिंह और अन्य को 46,500/- रुपये की एवज में पंजीकृत विक्रय विलेख दिनांक 07.04.1980 द्वारा बेच दिया था।

(2.2) सिविल सूट संख्या 421/1981 भी वादी जगतार सिंह द्वारा 10 बीघा 18 बिस्वा के परिमाण वाली भूमि के संबंध में दायर किया गया था जो 40 बीघा और 19 बिस्वा के परिमाण वाली भूमि के 218/819 वें हिस्से का प्रतिनिधित्व करती है जैसा कि मूल रूप से जीत सिंह और उनकी पत्नी पीर कौर के स्वामित्व वाले वाद के पैरा 1 में वर्णित है, जिसने प्रतिवादी झब्बर सिंह और अन्य को पंजीकृत बिक्री विलेख दिनांक 24.04.1980 के तहत 42,500 / - रुपये के मूल्य पर बेचा था।

(2.3) दिनांक 06.04.1981 को वादी जगतार सिंह ने वाद भूमि के कब्जे की मांग करते हुए उक्त दो वाद इस आधार पर फाइल किए कि उसे संयुक्त खेवट में सह-हिस्सेदार के रूप में उन विक्रय विलेखों को प्री-एम्प्ट करने का श्रेष्ठ अधिकार था (पूर्वक्रय का अधिकार) (superior right to pre-empt), हालांकि उक्त स्वामी जीत सिंह द्वारा वादी को बिक्री की कोई सूचना नहीं दी गई थी।प्रतिवादी झब्बर सिंह और अन्य ने प्री-एम्प्ट करने के श्रेष्ठ अधिकार था (पूर्वक्रय का अधिकार) (superior right to pre-empt), के वादी के दावे को नकारते हुए मुकदमों का विरोध किया।

(2.4) उक्त वादों के लंबित रहने के दौरान, 25.05.1982 को, प्रतिवादी झब्बर सिंह ने सहायक कलेक्टर, तहसील पिहोवा के समक्ष विभाजन का एक मामला संख्या 78/टीपी दायर किया, जिसमें वादी जगतार सिंह ने अपनी आपत्तियां दर्ज कराई थी.सहायक कलेक्टर, तहसील, कुरुक्षेत्र ने निम्नलिखित आदेश दिनांक 25.05.1982 को निम्नानुसार पारित किया:- -

> "........इसलिए जगतार सिंह और अन्य लोगों की आपत्तियों को खारिज किया जाता है और विभाजन के तरीके की पुष्टि की जाती है, जो पहले ही तैयार किया जा चुका है। नक्शा बे पहले से ही फाइल में संलग्न है क्योंकि यह पहले से ही तैयार किया जा चुका है।इसलिए, नक्शा बे के बारे में आपत्तियों के लिए इस मामले को 31.05.82 को सूचीबद्ध किया जाना है।

(2.5) तत्पश्चात् दिनांक 31.07.1982 को सहायक कलक्टर, तहसील पिहोवा ने निम्नलिखित आदेश पारित किया :- -

> “आज फाइल पेश की गई है।"पार्टियों के वकील मौजूद हैं, पटवारी और कानूनगो भी मौजूद हैं, जिन्होंने पहले के आदेश के अनुसार भूखंडों के मार्ग और सीमाओं के लिए प्रावधान किया है और जिसके बारे में पार्टियों को समझाया गया है।पहले इन भूखंडों के लिए कोई मार्ग नहीं था।फिर भी खसरा 802/1 और 806 ग्राम कमोदा से ग्राम ज्योतिसर तक मार्ग दिया गया है जो इन गांवों को जोड़ता है।दूसरा मार्ग 4-5 एकड़ के बाद पूर्व दिशा में है और यदि इन भूखंडों को कोई अन्य मार्ग नहीं मिला तो यह इस तरह के मार्ग के लिए सही स्थान है।विभाजन के नक्शा बे के अनुसार विभाजन स्वीकृत किया जाता है जिसका विवरण इस प्रकार है:

नाम	आवंटित खसराओं की संख्या
1. झब्बर सिंह, बालक राम, सरदार राम, अफसर राम, शेर सिंह, संतू पुत्रान शिब्बू, सभी छह भाग बराबर हैं	790/2-792/2-792/1/2-800 2-16, 3-14 0-4 4-0 801 783/2-802/1-806/1 4-0 0-6 3-16 3-16 कुल: 22 बीघा 12 बिस्वा
2. जगतार सिंह, प्रणव सिंह, पलविंदर सिंह, तरसेम सिंह पुत्रान दर्शन सिंह। सभी चारों भाग बराबर हैं।	788-789-783/1-784 3-8 4-11 3-14 4-0 787 2-2 कुलः 17 बीघा 15 बिस्वा

ऊपर के अलावा, नंबर 1 के लिए 802/1-806-790/1-792/1 0-4 0-4 0-2 x

नंबर 2 के लिए 792/1 0-2 कुलः 0 - 12 बिस्वा

अब अपील के लिए समय समाप्त होने के बाद इस मामले को 30/8/82 को सूचीबद्ध किया जाना है।खुली अदालत में उच्चारित।

31-7-82

एसडी/-

ए. सी. द्वितीय श्रेणी

पिहोवा"

(2.6) यह आगे उभर कर आता है कि उसके बाद प्रतिवादी झब्बर सिंह ने ट्रायल कोर्ट के समक्ष एक आवेदन दायर किया था जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ वादों में लिखित बयान में संशोधन की मांग की गई थी कि वादों की लंबितता के दौरान वाद भूमि सहित संयुक्त खाता को एसी-1 ग्रेड, पिहोवा द्वारा दिनांक 31.07.1982 के आदेश द्वारा विभाजित कर दिया गया था। इस तरह के संशोधन के परिणामस्वरूप, मुकदमे में दिनांक 28.09.1982 के आदेश के तहत ट्रायल कोर्ट द्वारा एक अतिरिक्त मुद्दा तैयार किया गया, "क्या वाद भूमि का विभाजन किया गया है ?

(2.7) दिनांक 12.10.1982 को कलेक्टर गुहला ने सहायक कलेक्टर, पिहोवा द्वारा पारित आदेश दिनांक 31.07.1982 के विरुद्ध उक्त जगतार सिंह एवं अन्य द्वारा दायर अपील को खारिज कर दिया।दिनांक 19.10.1982 को उक्त जगतार सिंह ने आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन दायर किया था, जिसमें आयुक्त ने प्रारंभ में दिनांक 31.07.1982 के आदेश के क्रियान्वयन के विरुद्ध दिनांक 16.11.1982 तक के लिए स्थगनादेश दिया था, तथापि उक्त स्थगन को उसके बाद बढ़ाया नहीं गया था।

(2.8) दोनों वाद 420/1981 और 421/1981 सिविल न्यायाधीश, एसजेआईआईसी कैथल द्वारा दिनांक 01.12.1982 के निर्णयों और डिक्री द्वारा खारिज कर दिए गए, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया था कि विवाद में खेवट आदेश दिनांक 31.07.1982 के अनुसार अब संयुक्त नहीं रह गया था और यह कि वादी ने निर्णय और डिक्री पारित करने की तिथि पर सह-भागीदार के रूप में संयुक्त स्थिति

खो दी थी। वादी जगतार सिंह द्वारा की गई प्रथम अपील भी अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, कुरुक्षेत्र द्वारा निर्णय और डिक्री दिनांक 08.04.1983 द्वारा खारिज कर दी गई।

(2.9) तथापि, वादी जगतार सिंह द्वारा उक्त प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णयों और डिक्रियों के खिलाफ दायर की गई आरएसए संख्या 1470/83 और आरएसए संख्या 1557/83 को उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 17.08.2007 के आक्षेपित सामान्य निर्णय और आदेश द्वारा अनुमति दी गई।

3. पंजाब भूमि राजस्व अधिनियम, 1887 (इसके बाद 'राजस्व अधिनियम'के रूप में संदर्भित) की धारा 121 में निहित प्रावधानों पर भरोसा करते हुए अपीलकर्ताओं (मूल प्रतिवादियों) के लिए उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री नरेंद्र हुड्डा ने प्रस्तुत किया कि विभाजन के पूरा होने के पश्चात् राजस्व अधिकारी का विभाजन का लिखत तैयार करने और विभाजन के प्रभावी होने की तारीख नियत करने का कार्य केवल एक निष्पादक या मंत्रालयी कार्य था। जैसे कि "नक्शा बे"पहले से ही तैयार किया गया था जब सहायक कलेक्टर ने आदेश पारित किया था, और विभाजन के तरीके के संबंध में प्रतिवादी (मूल वादी जगतार सिंह) की आपत्तियों को उनके आदेश दिनांक 25.05.1982 द्वारा पहले ही खारिज कर दिया गया था, उक्त "नक्शा बे"की पुष्टि की गई थी, और उसके बाद पार्टियों के बीच भूमि के अंतिम आवंटन के लिए उक्त "नक्शा बे"को "नक्शा ज़ीम"के रूप में माना जाना था। उनके अनुसार, उसके बाद सहायक कलेक्टर ने 31.07.1982 को विभाजन को स्वीकार करते हुए आदेश पारित किया था, और 12.10.1982 को कलेक्टर के समक्ष जगतार सिंह द्वारा दायर उक्त आदेश के खिलाफ अपील को खारिज कर दिया गया था, और इसलिए पूर्व-क्रय का अधिकार भी यदि वाद दायर करने की तिथि पर वादी जगतार सिंह के पक्ष में मौजूद था, तो 01.12.1982 को दीवानी वादों में डिक्री पारित करने की तिथि पर जीवित नहीं रहा। उन्होंने आगे कहा कि पंजाब प्री-एम्प्शन एक्ट, 1913 (जिसे इसमें इसके बाद प्रीएम्प्शन एक्ट कहा गया है) के तहत प्रीएम्प्शन का अधिकार एक कमजोर प्रकार का अधिकार है और स्थापित कानूनी स्थिति के अनुसार, प्री-एम्प्शन का अधिकार न केवल वाद दाखिल करने की तारीख को होना चाहिए, बल्कि डिक्री पारित होने की तारीख को भी अस्तित्व में रहना चाहिए।श्री हुड्डा ने **हर देवी बनाम राम जस और अन्य (1974 पी. एल. जे. 345); लाला राम बनाम वित्तीय आयुक्त, हरियाणा (1991 एससीसी ऑनलाइन पी एंड एच 1105); प्रीतम सिंह बनाम जसकौर सिंह (1992 एससीसी ऑनलाइन पी एंड एच 676) और मुंशी बनाम हरियाणा वित्तीय आयुक्त, हरियाणा, चंडीगढ़ (1993 एससीसी ऑनलाइन पी एंड एच 1086)** में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के फैसलों पर, अपनी प्रस्तुतियों के समर्थन के लिए, भरोसा किया है।

4. इसके विपरीत, अपीलार्थियों की ओर से की गई प्रस्तुतियों का विरोध करते हुए प्रत्यर्थी की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री राजीव भल्ला ने प्रस्तुत किया कि राजस्व अधिनियम की धारा 121 के अनुसार, विभाजन सहायक कलेक्टर द्वारा विभाजन की लिखत में अधिसूचित की जाने वाली तारीख को प्रभावी होता है न कि 'नक्शा बे'या 'नक्शा ज़ीम'की तैयारी की तारीख को।उनके अनुसार, उक्त तिथि राजस्व का भुगतान करने के लिए पार्टियों के दायित्व का निर्धारण करने और अधिकारों के रिकॉर्ड में स्वामित्व अधिकारों को दर्ज करने के उद्देश्य से भी महत्वपूर्ण है।श्री भल्ला ने हरियाणा भूमि अभिलेख नियमावली, 2013 में निहित विभिन्न प्रोफार्मा

पर भरोसा करते हुए कहा कि सह-भागीदार की स्थिति के विभाजन और विच्छेद/ पृथक्करण को सहायक कलेक्टर द्वारा केवल राजस्व अधिनियम की धारा 121 और नियमावली के खंड 18.12 से 18.14 के अनुसार अधिसूचित किया जा सकता है।विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री हुड्डा द्वारा अपीलार्थियों के लिए जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया था, उनमें विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री भल्ला ने प्रस्तुत किया कि उक्त मामलों में सह-अंशधारी की स्थिति विभाजन की लिखत में दी गई तारीख को समाप्त हो गई थी, जबकि वर्तमान मामले में न तो विभाजन का लिखत तैयार किया गया था और न ही राजस्व अधिनियम की धारा 121 के अनुसार सहायक कलेक्टर द्वारा तारीख निर्धारित की गई थी, और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता था कि विभाजन की कार्यवाही वादों में पारित डिक्रियों की तारीख से पहले समाप्त हो गई थी। **बिशन सिंह और अन्य बनाम खज़ान सिंह (1) {एआईआर 1958 एससी 838}** के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा करते हुए उन्होंने प्रस्तुत किया कि पूर्वक्रय का अधिकार / अग्रक अधिकार (right of pre-emption) प्रतिस्थापन का अधिकार है और पुनर्खरीद का अधिकार नहीं है और इसलिए वादी को अपीलकर्ता-प्रतिवादियों के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेखों को मुकदमों में चुनौती देने की आवश्यकता नहीं थी।

5. पक्षकारों के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए प्रतिद्वंद्वी तर्कों की बेहतर समझ के लिए, पूर्व-क्रय अधिनियम (Pre-emption Act) और राजस्व अधिनियम में निहित कुछ प्रावधानों को संदर्भित करना फायदेमंद होगा।पूर्व-क्रय अधिनियम (Pre-emption Act) की धारा 4 पूर्वक्रय के अधिकार / अग्रक अधिकार (right of pre-emption) से संबंधित है जो निम्नानुसार है:

> पूर्वक्रय (प्री-एम्प्शन) आवेदन का अधिकार. - पूर्वक्रय (प्री-एम्प्शन) / अग्रक्रय के अधिकार का अर्थ होगा किसी व्यक्ति का कृषि भूमि या गाँव की अचल संपत्ति या शहरी अचल संपत्ति को अन्य व्यक्तियों की वरीयता में प्राप्त करने का अधिकार, और यह ऐसी भूमि के संबंध में केवल बिक्री के मामले में और ऐसी संपत्ति के संबंध में केवल बिक्री के मामले में या ऐसी संपत्ति को भुनाने के अधिकार के फोरक्लोजर के मामले में उत्पन्न होता है।
> इस धारा में कुछ भी एक न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने से नहीं रोकेगा कि एक बिक्री/विक्रय से भिन्न तात्पर्यित/कथित परित्याग असल में विक्रय ही है। "

6. धारा 15 व्यक्तियों की कुछ श्रेणियों के पक्ष में पूर्वक्रय के अधिकार / अग्रक अधिकार (right of pre-emption) के निहित होने से संबंधित है।इसका प्रासंगिक भाग निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:- -

> **"15. ऐसे व्यक्ति जिनमें कृषि भूमि और गाँव की अचल संपत्ति की बिक्री के संबंध में पूर्वक्रय का अधिकार / अग्रक अधिकार (right of pre-emption) निहित है ~**
>
> (1) कृषि भूमि और गाँव की अचल संपत्ति के संबंध में पूर्वक्रय का अधिकार / अग्रक अधिकार (right of pre-emption) निहित होगा-

(क)…….

(ख) जहां बिक्री / विक्रय संयुक्त भूमि या संपत्ति में से एक हिस्से की है और संयुक्त रूप से सभी सह-हिस्सेदारों द्वारा नहीं की जाती है,

-पहला, विक्रेता या विक्रेताओं के बेटों या बेटियों या बेटों के बेटे या बेटियों के बेटों में;

दूसरे, विक्रेता या विक्रेताओं के भाइयों या भाई के पुत्रों में;

तीसरे, विक्रेता या विक्रेता के पिता के भाई या पिता के भाई के पुत्रों में

चौथा, अन्य सह-शेयरों (सह हिस्सेदार/ सह-अंशधारी) में;

पांचवां, उन काश्तकारों / किरायेदारों में जो विक्रेता या विक्रेता के किरायेदारी के तहत बेची गई भूमि या संपत्ति या उसके हिस्से को रखते हैं;

(ग)...."

7. प्री-एम्प्टर को नोटिस देने की प्रक्रिया धारा 19 में निर्धारित की गई है और प्री-एम्प्टर द्वारा विक्रेता/वेंडर को नोटिस देने की प्रक्रिया धारा 20 में निर्धारित की गई है।प्री-एम्प्शन एक्ट की धारा 21 में कहा गया है कि प्री-एम्प्शन के अधिकार का हकदार कोई भी व्यक्ति, जब बिक्री या पुरोबंध पूरा हो गया है, उस अधिकार को लागू करने के लिए एक मुकदमा ला सकता है।

8. जहां तक पंजाब भू-राजस्व अधिनियम में निहित प्रावधानों का संबंध है, अध्याय IX "विभाजन"से संबंधित है। इसकी धारा 111 के अनुसार, विभाजन के लिए आवेदन भूमि के किसी भी संयुक्त मालिक या किरायेदारी के किसी भी संयुक्त किरायेदार द्वारा किया जा सकता है जिसमें अधिभोग का अधिकार अस्तित्व में है, राजस्व अधिकारी को उसमें उल्लिखित परिस्थितियों में किया जा सकता है।धारा 111 के तहत आवेदन प्राप्त करने पर राजस्व अधिकारी द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रिया धारा 113 से 120 में निर्धारित है।

9. अन्य प्रश्नों के निपटान और अपील से संबंधित धारा 118 निम्नानुसार है:- -

"118. अन्य प्रश्नों का निस्तारण :-(1) जब संपत्ति के बंटवारे या विभाजन करने के तरीके के बारे में कोई प्रश्न हो, तो राजस्व-अधिकारी, ऐसी चोट के बाद, जैसा कि वह आवश्यक समझे, प्रश्न पर अपने निर्णय और निर्णय के अपने कारणों को बताते हुए एक आदेश दर्ज करेगा।

(2) उप-धारा (1) के तहत एक आदेश की तारीख से पंद्रह दिनों के भीतर एक अपील की जा सकती है, और, जब इस तरह की अपील को प्राथमिकता दी जाती है और

उसके संस्थित होने की सूचना राजस्व-अधिकारी को प्रमाणित की जाती है [उस प्राधिकारी द्वारा जिसके लिए अपील की गई है], राजस्व अधिकारी अपील के निस्तारण तक कार्यवाही पर रोक लगायेगा।

(3)……

(4)……"

10. धारा 121 जो विभाजन के लिखत/दस्तावेज से संबंधित है, हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक होने के कारण निम्नानुसार पुनरुत्पादित की जाती है:

"121. विभाजन की लिखत/दस्तावेज:- जब एक विभाजन पूरा हो जाता है, तो राजस्व अधिकारी विभाजन की लिखत/दस्तावेज तैयार करवाएगा, और जिस तारीख को विभाजन प्रभावी होना है, उसें उसमें दर्ज किया जाएगा।

11. धारा 123 राजस्व अधिकारी के हस्तक्षेप के बिना किए गए विभाजन की पुष्टि से संबंधित है जो निम्नानुसार है:

"123. निजी तौर पर की गई विभाजन की पुष्टि:- -(1) किसी भी मामले में जिसमें राजस्व-अधिकारी के हस्तक्षेप के बिना एक विभाजन किया गया है, और पार्टी विभाजन की पुष्टि करने वाले आदेश के लिए राजस्व-अधिकारी को आवेदन कर सकती है।

(2) आवेदन प्राप्त होने पर, राजस्व-अधिकारी मामले की जांच करेगा, और यदि वह पाता है कि विभाजन वास्तव में किया गया है, तो वह इसकी पुष्टि करने वाला आदेश दे सकता है और धारा 119, 120, 121 और 122 के तहत आगे बढ़ सकता है , या उन धाराओं में से किसी के अधीन, जैसी कि परिस्थितियां अपेक्षित हों, उसी प्रकार आगे कार्यवाही कर सकेगा मानो विभाजन इस अध्याय के अधीन स्वयं को किए गए आवेंदन पर किया गया था।

12. शुरुआत में, यह ध्यान दिया जा सकता है कि वादी जगतार सिंह, वर्तमान प्रतिवादी के पूर्ववर्ती, ने खुद को विक्रेता जीत सिंह के साथ संयुक्त खेवट में सह-हिस्सेदार होने का दावा करते हुए मुकदमा दायर किया था और वाद भूमि के कब्जे के संबंध में प्रतिवादी झब्बर सिंह और अन्य के विरुद्ध इस आधार पर राहत की मांग की थी कि सह-हिस्सेदार के रूप में उसे विक्रय को पूर्वक्रय/ हक़्शुफा (pre-empt) करने का एक बेहतर अधिकार था और उसे ऐसी बिक्री/विक्रय की तारीख को या उससे पहले वाद भूमि के बिक्री/विक्रय की कोई सूचना नहीं दी गई थी।बहुत ही ढीले ढंग से तैयार किए गए वाद में, वादी ने न तो यह दलील दी थी कि वह कैसे सह-भागीदार था, न ही उसने

उक्त जीत सिंह, वाद भूमि के मालिक, जिसके साथ उसने सह-हिस्सेदार होने का दावा किया था, को पक्षकार नहीं बनाया था, और जिसने वाद की भूमि प्रतिवादी झब्बर सिंह व अन्य को बेच दी थी।यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्री-एम्प्शन/पूर्वक्रय के एक वाद में, विक्रेता अर्थात, वाद भूमि का स्वामी जिसने कथित तौर पर वादी को बिक्री का कोई नोटिस नहीं दिया था जैसा कि पूर्वक्रय/प्री-एम्प्शन अधिनियम की धारा 19 के तहत दिया जाना आवश्यक है और जिनके/जिसके खिलाफ बिक्री/विक्रय को पूर्वक्रय/ हक़शुफा (pre-empt) के अधिकार का दावा किया गया है, वह एक उचित पक्ष होगा, यदि आवश्यक नहीं भी है, तो भी मुकदमे में शामिल मुद्दों पर पूर्ण और अंतिम निर्णय के लिए वह एक उचित पार्टी होगी।

13. जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **उ.प्र. आवास एवं विकास परिषद बनाम ज्ञान देवी (2) {एआईआर 1995 एससी 724}**, में माना गया है कि आवश्यक पक्षकार वह है जिसके बिना प्रभावी ढंग से कोई आदेश नहीं दिया जा सकता है; और एक उचित पक्षकार वह है जिसकी अनुपस्थिति में एक प्रभावी आदेश दिया जा सकता है लेकिन कार्यवाही में शामिल प्रश्न पर पूर्ण और अंतिम निर्णय के लिए जिसकी उपस्थिति आवश्यक है। जब वादी जगतार सिंह द्वारा मालिक जीत सिंह के साथ भूमि में सह-हिस्सेदार के रूप में बिक्री के पूर्वक्रय/ हक़शुफा (pre-empt) करने के अधिकार का दावा किया गया था, यह आरोप लगाते हुए कि धारा 19 में निहित अनिवार्य प्रावधान का अर्थात प्री - एम्प्टर को नोटिस देने के लिए, मालिक या विक्रेता जीत सिंह द्वारा अनुपालन नहीं किया गया था, पार्टी प्रतिवादी के रूप में उनकी उपस्थिति अन्य प्रतिवादियों झब्बर सिंह और अन्य के साथ, पक्षकारों के बीच विवादों को प्रभावी रूप से और अंतिम रूप से निपटाने के लिए वांछनीय थी।हालांकि, आदेश I, नियम 9 में कहा गया है कि कोई भी मुकदमा गलत पार्टियों / पक्षकारों या असंबद्ध पार्टियों / पक्षकारों के होने के कारण ख़ारिज नहीं होगा, अदालत द्वारा यह सुनिश्चित करने के लिए ध्यान रखा जाना चाहिए कि सभी पक्ष, चाहे वह वादी हो या प्रतिवादी, जिनकी उपस्थिति मुकदमे में शामिल मुद्दों पर पूर्ण और अंतिम निर्णय के लिए आवश्यक है, अदालत के समक्ष हैं। यही कारण है कि अदालतों को आदेश 1, नियम 10, सीपीसी के अनुसार कार्यवाही के किसी भी चरण में पक्षकारों को हटाने या जोड़ने का अधिकार है।

14. आगे, वर्तमान मामले में पूरी तरह से अस्पष्ट और ढीले ढंग से तैयार किए गए वादपत्र के संबंध में, न्यायालय संहिता के आदेश VI, नियम 2(1) में निहित दलीलों के मूल और मूलभूत (कार्डिनल) नियम को फिर से लागू करने के लिए प्रलोभित/लालायित है, जिसके अनुसार प्रत्येक याचिका (अर्थात्, वादपत्र या लिखित कथन) में तात्विक तथ्यों के संक्षिप्त रूप में एक कथन होना चाहिए, जिस पर पक्षकार, अपने दावे या प्रतिरक्षा के लिए अभिवचन करता है, जैसा भी मामला हो।निःसंदेह, अभिवचन में ऐसे साक्ष्य शामिल नहीं होने चाहिए जिनके द्वारा ऐसे भौतिक तथ्यों को साबित किया जाना है, फिर भी वाद हेतुक अर्थात् तात्विक तथ्यों को प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक तथ्यों का उल्लेख किया जाना चाहिए।एकल तात्विक तथ्य का विलोपन वाद हेतुक का अधूरा कारण होगा यानि कार्रवाई का कारण अधूरा रह जाएगा और उस स्थिति में दावे का कथन विधि की दृष्टि से बुरा हो जाएगा।

15. अब, जहां तक बिक्री/विक्रय के पूर्वक्रय/ हक़्शुफा (pre-emption) के अधिकार का संबंध है, यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह एक बहुत ही कमजोर अधिकार है और इसे सभी वैध तरीकों से पराजित किया जा सकता है। इस न्यायालय ने 1958 में **बिशन सिंह और अन्य बनाम खज़ान सिंह और अन्य** (उपर्युक्त) के मामले में बिक्री/विक्रय के पूर्वक्रय/ हक़्शुफा (pre-emption) के अधिकार की रूपरेखा निर्धारित की थी।

उसमें चार न्यायाधीशों की न्याय पीठ द्वारा यह मत व्यक्त किया गया था कि -

> 11..............प्री-एम्प्शन का अधिकार बेची जाने वाली वस्तु का अधिकार नहीं है, बल्कि बेचे जाने वाली वस्तु के प्रस्ताव का अधिकार है।इस अधिकार को प्राथमिक या अंतर्निहित अधिकार कहा जाता है।(2) पूर्व-नियोजक को विक्रय की गई वस्तु का अनुसरण करने का द्वितीयक अधिकार या उपचारात्मक अधिकार है।(3) यह प्रतिस्थापन का अधिकार है किंतु पुनः क्रय का नहीं अर्थात पूर्व-नियोक्ता पूरा सौदा करता है और मूल विक्रेता की स्थिति में कदम रखता है।(4) यह बेची गई पूरी संपत्ति का अधिग्रहण करने का अधिकार है न कि बेची गई संपत्ति का हिस्सा।(5) अधिमान अधिकार का सार होने के कारण वादी को प्रतिवादी या उसके स्थान पर प्रतिस्थापित व्यक्ति से बेहतर अधिकार होना चाहिए।(6) अधिकार एक बहुत कमजोर अधिकार होने के कारण, इसे सभी वैध तरीकों से पराजित किया जा सकता है, जैसे कि किसी वरिष्ठ या समान अधिकार के दावेदार को उसके स्थान पर प्रतिस्थापित करने की अनुमति देना।"

16. उपरोक्त स्थिति को इस न्यायालय द्वारा **बारासात नेत्र अस्पताल बनाम कौस्तभ मंडल 3** वाले मामले में दोहराया गया था और हाल ही में **रघुनाथ (मृत) के मामले में एलआरस बनाम राधा मोहन (मृत) के मामले में एलआरस के माध्यम से और अन्य 4**, जिसमें निम्नलिखित रूप में यह मत व्यक्त किया गया हैः-

> "14. हमने उपरोक्त मुद्दे पर विचार किया है और इसे निर्धारित करने के लिए, हमने, शुरुआत में ही, बारासात आई हॉस्पिटल मामले [बारासात आई हॉस्पिटल बनाम कौस्तभ मंडल, (2019) 19 एससीसी 767:(2020) 4 एससीसी (सीआईवी) 810] में निर्णय दिया था।इस प्रकार, हमने पूर्वोक्त निर्णय के पैरा 10 में पहले के न्यायिक दृष्टिकोण का उल्लेख किया है।पूर्व-अधिकार के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से पता चलता है कि यह रिवाजों पर आधारित मुस्लिम शासन के आगमन के कारण अपनी उत्पत्ति करता है, जिसे बड़े पैमाने पर भारत के उत्तर में

स्थित विभिन्न न्यायालयों में स्वीकार किया गया।न्यायिक घोषणाओं द्वारा पूर्व-नियोजक को दो अधिकार होने का अभिनिर्धारित किया गया है।पहला, अंतर्निहित या प्राथमिक अधिकार, जो बेचने के बारे में एक चीज की पेशकश का अधिकार है और बेची गई चीज का पालन करने का द्वितीयक या उपचारात्मक अधिकार है।यह एक द्वितीयक अधिकार है, जो मूल खरीदार के स्थान पर प्रतिस्थापन का केवल एक अधिकार है।पूर्व-नियोजक यह दिखाने के लिए बाध्य है कि उसके पास न केवल खरीदार की तरह अच्छे अधिकार है, बल्कि यह अच्छे के अधिकार से बेहतर है और वह भी उस समय जब पूर्व-नियोजक अपने अधिकार का प्रयोग करता है। हमारे विचार में, इस अवलोकन को नोट करना प्रासंगिक है और हम एक बार फिर इस बात पर जोर देते हैं कि अधिकार एक बहुत कमजोर अधिकार है और इस प्रकार, उच्चतर या समान अधिकार के दावे सहित सभी वैध तरीकों से पराजित होने में सक्षम है।

17. इस मोड़ पर, यह उल्लेख करना भी उचित होगा कि इस तथ्य के अलावा कि हक-शुफ़ा का अधिकार बहुत कमजोर अधिकार है और सभी वैध तरीकों से पराजित होने में सक्षम है, पूर्वक्रयाधिकारी को यह स्थापित करना चाहिए कि उसे बिक्री की तारीख को, वाद फाइल करने की तारीख को और न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख को हकशफ़ा द्वारा लेना का अधिकारथा। पूर्वक्रयाधिकारी या दावेदार-वादी को, जो विक्रय की तारीख को विक्रय को पूर्व-नियोजित करने के अधिकार का दावा करता है, यह भी साबित करना होगा कि ऐसा अधिकार प्रथम न्यायालय की डिक्री के पारित होने तक बना रहेगा।यदि दावेदार-वादी उस अधिकार को खो देता है या वादी वाद के न्यायनिर्णयन से पहले दावेदार के बराबर या उससे ऊपर अपने अधिकार में सुधार करता है, तो हक शुफ़ा का वाद विफल हो जाएगा।

18. इस न्यायालय ने 1971 से **भगवान दास (मृत) द्वारा एलआरस और अन्य बनाम चेत राम 5** के मामले में कानून के इस प्रस्ताव को अच्छी तरह से तय किया है। उक्त मामले में, इस न्यायालय ने **रामजी लाल और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य 66 एयर 1966 पी एंड एच 374** वाले मामले में पंजाब उच्च न्यायालय के पूर्ण न्यायपीठ के विनिश्चय का अनुमोदन किया था, जिसने यह निर्णय दिया था कि डिक्री की तारीख तक हकशफ़ा द्वारा लेने के लिए पूर्वक्रयाधिकारी को अपनी अर्हता बनाए रखनी चाहिए।

19. **श्याम सुंदर और अन्य बनाम राम कुमार और अन्य 7 7 (2001) 8 एससीसी 24** के मामले में भी संविधान पीठ इस मुद्दे की जांच करते समय कि क्या हक-शुफ़ा के वाद में, प्रीएम्प्टर को बिक्री की तारीख को और प्रथम न्यायालय की डिक्री की तारीख को प्रीएम्प्ट करने का अधिकार होना चाहिए, और क्या उस अधिकार की हानि डिक्री की तारीख के बाद या तो अपने स्वयं के कार्य द्वारा या उसके नियंत्रण से परे किसी कार्य द्वारा या विधान में किसी पश्चात्वर्ती परिवर्तन द्वारा, जो पहली बार के न्यायालय की डिक्री के खिलाफ दायर अपील के लंबित रहने के दौरान प्रवर्तन में संभावित है, कुछ सिद्धांत निर्धारित किए गए हैं, जो पंजाब हरियाणा और उच्च न्यायालय द्वारा रामजी लाल बनाम पंजाब राज्य में दिए गए पूर्ण पीठ के निर्णय सहित विभिन्न निर्णयों का विश्लेषण करने के बाद पूर्व-एम्प्टर के अधिकार को प्रभावित करेगा या नहीं।

> 10. निर्णयों की प्रथम श्रेणी में निर्दिष्ट पूर्वोक्त विनिश्चयों के विश्लेषण पर, जो विधिक सिद्धांत उभरते हैं वे निम्नलिखित हैंः
>
> 1. प्रीएम्प्टर को विक्रय की तारीख, वाद फाइल करने की तारीख और न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख को प्रीएम्प्ट करने का अधिकार अवश्य होना चाहिए।
>
> 2. ऐसे प्रीएम्पटर, जो विक्रय की तारीख को विक्रय को प्रीएम्पट करने के अधिकार का दावा करता है, यह साबित करना चाहिए कि ऐसा अधिकार प्रथम न्यायालय की डिक्री के पारित होने तक बना रहा। यदि दावेदार उस अधिकार को खो देता है या कोई प्रतिवादी वाद के न्यायनिर्णयन से पहले दावेदार के अधिकार के बराबर या उससे ऊपर अपने अधिकार में सुधार करता है, तो हक-शुफ़ा के लिए वाद विफल हो जाना चाहिए।
>
> 3. एक प्रीएम्पटर, जिसे वाद के दायर किए जाने की तारीख और डिक्री पारित किए जाने की तारीख को विक्रय को प्रीएम्प्ट करने का अधिकार है, प्रथम न्यायालय की डिक्री के पश्चात् ऐसे अधिकार की हानि से उसके हक-शुफ़ा के वाद के अधिकार या अनुरक्षणीयता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।
>
> 4. एक प्रीएम्पटर, जिसने विक्रय की तारीख, वाद फाइल करने की तारीख और प्रथम न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख को अपने अधिकार को साबित करने के पश्चात् प्रथमतः न्यायालय द्वारा पूर्व प्रभाव के लिए डिक्री अभिप्राप्त कर ली है, डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई अपील के लंबित रहने के

दौरान पश्चातवर्ती विधान द्वारा ऐसा अधिकार तब तक नहीं छीना जा सकता है जब तक कि ऐसे विधान का भूतलक्षी प्रभाव न हो।"

20. उपरोक्त कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए, आइए हम इस बात की जांच करें कि क्या प्रीएम्पटर अर्थात् वादी जगतार सिंह ने मूल स्वामी-विक्रेता जीत सिंह द्वारा विक्रय विलेखों के निष्पादन की तारीख से लेकर वाद दाखिल करने की तारीख तक और पहली बार न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख तक हक-शुफ़ा करने के अपने श्रेष्ठ अधिकार को स्थापित किया था।

21 तथ्यों को पुनः प्रस्तुत करते हुए, ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त वादी जगतार सिंह, वर्तमान प्रतिवादी के पूर्ववर्ती, ने 06.04.1981 को वादों को दायर किया था, जिसमें संयुक्त खेवट में सह-हिस्सेदार होने के आधार पर बिक्री को रोकने के अपने वरिष्ठ अधिकार का दावा करते हुए वादपत्र में अन्य बातों के साथ-साथ यह आरोप लगाया गया था कि वाद भूमि के मूल स्वामी जीत सिंह ने प्रतिवादी झब्बर सिंह और अन्य, वर्तमान अपीलकर्ताओं के पूर्ववर्तियों के पक्ष में, वादी को कोई नोटिस दिए बिना, 07.04.1980 और 24.04.1980 को पंजीकृत विक्रय विलेखों को निष्पादित किया था। चूंकि यह विवादित नहीं था कि वादी जगतार सिंह वर्ष 1978-1979 के लिए जमाबंदी (अनुलग्नक पी-1) के अनुसार संयुक्त खेवट में सह-हिस्सेदार था, इसलिए यह सुरक्षित रूप से अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि वादी को प्रश्नगत विक्रय विलेखों के निष्पादन की तारीख को और वाद दाखिल करने की तारीख को भी पूर्व-प्रभाव का अधिकार था।

22. तथापि, मुख्य मुद्दा जो हमारे समक्ष विचारार्थ आया है, वह यह है कि क्या वादी जगतार सिंह को निचली अदालत द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख अर्थात 01.12.1982 को पूर्व निर्णय करने का अधिकार था।

23. जैसा कि पहले कहा गया है, वादों के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादी झब्बर सिंह ने सहायक कलेक्टर के समक्ष प्रश्नगत भूमि के संबंध में विभाजन का मामला संख्या 78/टीपी दायर किया था, जिसमें वादी जगतार सिंह ने अपनी आपत्तियां दायर की थीं।सहायक कलेक्टर ने दिनांक 25.05.1982 के आदेश द्वारा जगतार सिंह की आपत्तियों को अस्वीकार कर दिया था और "नक्शा

बी" के बारे में आपत्तियों के लिए 31.05.1982 को मामला सूचीबद्ध किया था, जो पहले से ही तैयार था और फाइल के साथ संलग्न था।अभिलेख से पता चलता है कि 31.07.1982 को सहायक कलेक्टर ने पक्षकारों की उपस्थिति में भूखंडों के मार्ग और सीमाओं का उपबंध किया और 'नक्शा बी' के अनुसार विभाजन का ब्यौरा देते हुए आदेश पारित किया जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि कौन सा खसरा नंबर झब्बर सिंह को आवंटित किया जाएगा और कौन सा खसरा नंबर जगतार सिंह को आवंटित किया जाएगा।

24. विचारण न्यायालय ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के विभिन्न फैसलों पर विचार-विमर्श करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया कि सहायक कलेक्टर द्वारा दिनांक 31.07.1982 को पारित आदेश के अनुसार विवाद में खेवट अब संयुक्त नहीं रहा था और वादी ने उस तारीख को सह-हिस्सेदार की अपनी स्थिति खो दी थी।इसलिए, विचारण न्यायालय के अनुसार, वादी के पास डिक्री की तारीख को सह-हिस्सेदार का दर्जा नहीं था।वादी जगतार सिंह द्वारा पेश की गई अपीलों में प्रथम अपीलीय न्यायालय ने, विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों और डिक्रियों की पुष्टि करते हुए और वादी की अपीलों को खारिज करते हुए दिनांक 08.04.1983 के निर्णय और डिक्री द्वारा अभिनिर्धारित किया कि जैसे ही 31.07.1982 का आदेश सहायक कलेक्टर द्वारा पारित किया गया था, पक्षकारों के बीच संयुक्त संबंध समाप्त हो गया था और यह कि वादी विवाद में भूमि का सह-हिस्सेदार नहीं रहा था।

25. तथापि, मूल वादी जगतार सिंह द्वारा प्रस्तुत दूसरी अपीलों में उच्च न्यायालय ने निचले दो न्यायालयों द्वारा अभिलिखित समवर्ती निष्कर्षों को उलट दिया और अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिनिर्धारित करते हुए कि डिक्री के पारित होने की तारीख को राजस्व अधिकारी द्वारा विभाजन का कोई लिखत नहीं खींचा गया था और इसलिए यह नहीं कहा जा सकता था कि पक्षकारों की संयुक्त स्थिति समाप्त हो गई थी या वादी ने हक-शुफ़ा का अपना श्रेष्ठ अधिकार खो दिया था। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश पारित करते समय **प्रीतम सिंह बनाम जसकौर सिंह 8** वाले मामले में अपने पूर्व निर्णय का अनुसरण किया था।

26. हमारी राय में, उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश में व्यक्त किए गए दृष्टिकोण पर अभिमत देना कठिन है कि चूंकि विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करने की तारीख को विभाजन का

कोई लिखत नहीं खींचा गया था, इसलिए पक्षकारों की संयुक्त स्थिति समाप्त नहीं हुई थी। पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा पंजाब भू-राजस्व अधिनियम और हरियाणा भू-अभिलेख मैनुअल में निहित प्रावधानों पर विधिवत विचार करने के बाद, यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि भू-राजस्व अधिनियम की धारा 118 के अनुसार, जब संपत्ति को विभाजित करने या विभाजन करने के तरीके के बारे में कोई सवाल है, तो राजस्व अधिकारी को ऐसी जांच के बाद, जो वह आवश्यक समझता है, प्रश्न पर अपना निर्णय बताते हुए एक आदेश दर्ज करना और निर्णय के लिए अपने कारणों को दर्ज करना आवश्यक है।
धारा 118 की उपधारा 2 में संपत्ति के विभाजन के प्रश्न या विभाजन करने के तरीके पर राजस्व अधिकारी के निर्णय से अपील किए जाने का प्रावधान है।इस प्रकार, भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 118 (2) के तहत पारित अपील में आदेश के खिलाफ कोई और अपील का प्रावधान नहीं है। धारा 119, धारा 112 के खंड 2 में निर्दिष्ट विभाजन से अपवर्जित संपत्ति के प्रशासन से संबंधित है, जिससे हमारा कोई संबंध नहीं है। धारा 120 विभाजन के बाद राजस्व और किराए के वितरण से संबंधित प्रावधानों के बारे में है।

27. सुसंगत धारा 121 में कहा गया है कि जब विभाजन पूरा हो जाएगा तो राजस्व अधिकारी विभाजन का एक लिखत तैयार कराएगा और उस तारीख को, जिसको विभाजन प्रभावी होना है, उसमें अभिलिखित कराएगा।यदि धारा 121 में अंतर्विष्ट उक्त उपबंध को बारीकी से पढ़ा जाए तो यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि यह विभाजन के पूरा होने के बाद राजस्व अधिकारी द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया के बारे में है।इसका अर्थ यह है कि विभाजन के बाद राजस्व अधिकारी को विभाजन की एक लिखत तैयार करानी होगी और उसमें उस तारीख को अंकित करना होगा जिस तारीख को विभाजन प्रभावी होना है।इसलिए, जब संपत्ति के विभाजन के प्रश्न पर धारा 118 में अनुध्यात जांच, या विभाजन करने का तरीका राजस्व अधिकारी द्वारा किया जाता है, और ऐसे निर्णय के कारणों के साथ प्रश्न पर उसके निर्णय को बताते हुए एक आदेश पारित किया जाता है, तो विभाजन को अपील के निर्णय के अधीन रहते हुए पूरा माना जाता है जो धारा 118 की उप-धारा 2 में अनुध्यात ऐसे आदेश के खिलाफ दायर किया जा सकता है।

28. यह नोट करना प्रासंगिक है कि पंजाब भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 117 राजस्व अधिकारी को किसी संपत्ति में, जिसके स्वामित्व की मांग की गई है, या तो स्वयं द्वारा या सक्षम

न्यायालय द्वारा निर्धारित किए जाने वाले प्रश्न को निर्दिष्ट करने के प्रश्न पर निर्णय करने का विवेकाधिकार प्रदान करती है।इस प्रकार, विभाजन के मामलों में राजस्व अधिकारी की अधिकारिता सिविल न्यायालय के साथ समवर्ती है।अतः, भू-राजस्व अधिनियम की धारा 121 का निर्वचन करने के प्रयोजन के लिए, न्यायालय सुरक्षित रूप से आदेश 20, नियम 18 सी. पी. सी. में अंतर्विष्ट उपबंधों से एक सादृश्य निकाल सकता है, जो संपत्ति के विभाजन के लिए डिक्री पारित करने से संबंधित प्रक्रिया से संबंधित है।उक्त प्रावधान इस प्रकार हैः -

> **"18. संपत्ति के विभाजन या उसमें किसी हिस्से के पृथक कब्जे के लिए वाद में डिक्री।- -**जहां न्यायालय संपत्ति के विभाजन के लिए या उसमें हिस्से के पृथक् कब्जे के लिए डिक्री पारित करता है, वहां -
>
> (1) यदि और जहां तक वह डिक्री सरकार को राजस्व के भुगतान के लिए निर्धारित किसी संपदा से संबंधित है, तो डिक्री संपत्ति में हितबद्ध कई पक्षकारों के अधिकारों की घोषणा करेगी, लेकिन ऐसी घोषणा के अनुसार और धारा 54 के उपबंधों के साथ कलेक्टर या उसके द्वारा इस संबंध में प्रतिनियुक्त किसी राजपत्रित अधीनस्थ द्वारा ऐसे विभाजन या पृथक्करण का निदेश देगी;
>
> (2) यदि और जहां तक ऐसी डिक्री किसी अन्य स्थावर संपत्ति या जंगम संपत्ति से संबंधित है, तो न्यायालय, यदि विभाजन या पृथक्करण बिना अतिरिक्त जांच के सुविधाजनक रूप से नहीं किया जा सकता है, तो संपत्ति में हितबद्ध अनेक पक्षकारों के अधिकारों की घोषणा करते हुए और ऐसे अतिरिक्त निदेश देते हुए एक प्रारंभिक डिक्री पारित कर सकता है जो अपेक्षित हो।"

29. **शुब करण बुबना उर्फ शुब करण प्रसाद बुबना बनाम सीता सरन बुबना और अन्य 9 (2009) 3 एससीसी (सीआईवी) 820** के मामले में इस न्यायालय को आदेश 20, नियम 18 में निहित कथित प्रावधानों पर विचार करने का अवसर मिला और यह निम्नलिखित रूप में देखा गयाः-

> "7....किसी शेयर के विभाजन या पृथक्करण के वाद में, प्रथम चरण में न्यायालय यह निर्णय करता है कि क्या वादी का वाद संपत्ति में हिस्सा है और क्या वह विभाजन और पृथक् कब्जे का हकदार है।इन दोनों मुद्दों पर निर्णय एक न्यायिक कार्य का प्रयोग है और पहले चरण के निर्णय को संहिता के आदेश 20 नियम 18

(1) के तहत डिक्री कहा जाता है और इसे संहिता के आदेश 20 नियम 18 (2) के तहत प्रारंभिक डिक्री माना जाता है।माप और सीमाओं के अनुसार पारिणामिक विभाजन, नियम 18 (1) के तहत भौतिक निरीक्षण, माप, गणना और विभाजन के विभिन्न क्रमपरिवर्तन/संयोजन/विकल्पों पर विचार करने के लिए आवश्यक एक मंत्रिस्तरीय या प्रशासनिक कार्य माना जाता है और नियम 18 (2) के तहत अंतिम डिक्री का विषय है।

30. यदि उक्त उपमा विभाजन से संबंधित पंजाब भू-राजस्व अधिनियम में अंतर्विष्ट उपबंधों के लिए लागू की जाती है तो हमारी यह राय है कि जब सम्पत्ति के विभाजन और विभाजन के तरीके के प्रश्न पर राजस्व अधिकारी द्वारा धारा 118 के अधीन कोई निर्णय लिया जाता है तो पक्षकारों के अधिकार और प्रास्थिति विनिश्चित हो जाती है और विभाजन पूरा हो गया समझा जाता है।इस स्तर पर, ऐसे निर्णय को डिक्री के रूप में माना जाना आवश्यक है।भू-राजस्व अधिनियम की धारा 121 में यथा अनुध्यात विभाजन लिखत तैयार करने की पारिणामिक कार्रवाई केवल राजस्व अधिकारी के समक्ष संस्थित विभाजन के मामले को पूरी तरह निपटाने के लिए किया जाने वाला मंत्रालयी या प्रशासनिक कार्य होगा। इसलिए, एक बार धारा 118 के तहत राजस्व अधिकारी द्वारा विभाजित की जाने वाली संपत्ति और विभाजन के तरीके पर निर्णय लेने के बाद, ऐसे निर्णय की तारीख पर पार्टियों की संयुक्त स्थिति, अपील में निर्णय के अध्यधीन, यदि कोई हो, अलग हो जाएगी। उसके बाद विभाजन का एक लिखत तैयार करने की परिणामी कार्रवाई होगी।इसलिए केवल इसलिए नहीं कहा जा सकता था कि विभाजन का दस्तावेज तैयार नहीं किया गया था, यह नहीं कहा जा सकता था कि विभाजन पूरा नहीं हुआ था या पार्टियों की संयुक्त स्थिति को नहीं तोड़ा गया था।

31. भूमि राजस्व अधिनियम की धारा 121 के पहले भाग में कहा गया है कि जब कोई विभाजन पूरा हो जाता है।इसका अर्थ यह है कि जब बंटवारे की जाने वाली संपत्तियों और विभाजन के तरीके से संबंधित मुद्दे का निर्णय राजस्व अधिकारी द्वारा किया जाएगा, तो विभाजन की लिखत तैयार करने और विभाजन की तारीख दर्ज करने के लिए धारा 121 का उत्तरार्द्ध लागू होगा।धारा 121 के उत्तरार्द्ध में निहित के रूप में की जाने वाली ऐसी कार्रवाई केवल एक निष्पादक कार्य या प्रशासनिक कार्य होगा, जो राजस्व अधिकारी के समक्ष पार्टी द्वारा संस्थित विभाजन के मामले को पूरी तरह से निपटाने के लिए किया जाएगा। जैसा कि सिविल वाद में डिक्री के मामले में होता है,

न्यायनिर्णयन विवाद के मामले के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का निर्णायक रूप से निर्णय करता है, हालांकि डिक्री प्रारंभिक होगी जब वाद को पूरी तरह से निपटाने से पहले आगे की कार्यवाही करनी होगी।इसी तरह, जब राजस्व अधिकारी द्वारा धारा 118 के तहत निर्णय लिया जाता है, तो विभाजन पूरा हो जाएगा, अधिनियम के तहत निर्धारित सीमा अवधि के बाद पार्टियों की संयुक्त स्थिति अलग हो जाएगी और संयुक्त नहीं रहेगी।विभाजन का लिखत तैयार करने की आगे की कार्यवाही केवल एक निष्पादक या मंत्रालयी कार्य होगा जो विभाजन के मामले को पूरी तरह से निपटाने के लिए किया जाएगा।

32. जहां तक वर्तमान मामले के तथ्यों का संबंध है, सहायक कलेक्टर अर्थात्, संबंधित राजस्व अधिकारी ने दिनांक 25.05.1982 के आदेश द्वारा वादी जगतार सिंह और अन्य लोगों द्वारा विभाजन के तरीके के संबंध में उठाई गई आपत्तियों को अस्वीकार कर दिया था और तदनुसार विभाजन के तरीके की पुष्टि की थी।उस दिन नक्शा बी पहले से ही फाइल के साथ संलग्न था और नक्शा बी के बारे में आपत्तियों की सुनवाई के लिए यह मामला 31.05.1982 को सूचीबद्ध किया गया था।31.07.1982 को सहायक कलेक्टर ने अन्य बातों के साथ-साथ यह कहते हुए आदेश पारित किया कि पटवारी और कानूगो उपस्थित थे, और उन्होंने पक्षकारों को प्लॉट के मार्ग और सीमाओं के बारे में समझाया था, और यह कि नक्शा बी के अनुसार, विभाजन स्वीकार किया गया था।उक्त आदेश में दोनों पक्षों अर्थात झब्बर सिंह और अन्य तथा जगतार सिंह को आवंटित खसरों की संख्या के ब्यौरे का भी उल्लेख किया गया है। उक्त "नक्शा बी" के अनुसार विभाजन को स्वीकार करने के बाद दलों का संयुक्त दर्जा समाप्त हो गया था।बेशक, 31.07.1982 दिनांकित कथित आदेश को वादी जगतार सिंह द्वारा कलेक्टर के समक्ष एक अपील के रूप में चुनौती दी गई थी, जिसने 12.10.1982 दिनांकित आदेश द्वारा उसे खारिज कर दिया था. कलेक्टर के उक्त आदेश को उक्त जगतार सिंह द्वारा आयुक्त के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन दाखिल करके चुनौती दी गई थी।हालांकि, आयुक्त ने शुरू में 31.07.1982 से 16.11.1982 तक के आदेश के संचालन के खिलाफ स्थगन की अनुमति दी थी, बेशक उक्त स्थगन को उसके बाद आगे नहीं बढ़ाया गया था।इन परिस्थितियों में, पक्षकारों की संयुक्त स्टेटस 31.07.1982 को समाप्त हो गई थी जब सहायक कलक्टर ने आदेश पारित किया था और जब 19.10.1982 को कलेक्टर द्वारा इसकी पुष्टि की गई थी।
निचली अदालत और अपीलीय अदालत ने इन परिस्थितियों में सही फैसला सुनाया था कि वादी जगतार सिंह को डिक्री की तारीख यानी 01.12.1982 को सह-हिस्सेदार का दर्जा प्राप्त नहीं था

और वादों में डिक्री के पारित होने की तारीख तक उसका अधिकार नहीं बचा था।हमारी राय में उच्च न्यायालय ने पंजाब प्री-एम्प्शन एक्ट और लैंड रेवेन्यू एक्ट के प्रावधानों की गलत व्याख्या और ट्रायल कोर्ट और अपीलीय कोर्ट द्वारा पारित फैसलों और डिक्रियों को रद्द करने में बड़ी गलती की है।

33. इस मामले की दृष्टि से, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित सामान्य आदेश को खारिज और अपास्त किया जाना चाहिए और तदनुसार अपास्त किया जाता है।तदनुसार दोनों अपीलों की अनुमति दी जाती है।

..... जे.

[अजय रस्तोगी]

..... जे.

[बेला एम. त्रिवेदी]

नई दिल्ली;

17.04.2023

अस्वीकरण:– स्थानीय भाषा में अनुवादित निणर्य वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्येश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्येश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वियन के उद्धेश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।